ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. No.- 63-69

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- IV, Issues-26, YEAR- Oct.-Dec.-2022

भारतीय ज्ञान परंपरा और 'जैन साहित्य'

स्नेहा जैन

शोध अध्येत्री– हिन्दी अध्ययन शाला एवं शोध केन्द्र, महाराजा छत्रसाल बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय छतरपुर (म0प्र0) भारत

Received-07.10.2022, Revised-14.10.2022, Accepted-19.10.2022 E-mail: greatsneha116@gmail.com

सारांशः ***भारतीय ज्ञान परम्परा अंतर्गत जैन ज्ञान परंपरा प्राचीनतम ज्ञान परंपरा है। यह अपनी प्राचीनता अनेक प्रमाणों से स्वतः सिद्ध करती है। यह अत्यंत व्यापक है। यह मानव मात्र नहीं जीव मात्र के कल्याण की बात करती है। अपनी उदारता के कारण भील, शूद्र, चांडाल यहाँ तक कि शेर, हाथी आदि तिर्यंच जीवों को भी ज्ञान के श्रद्धान का अधिकारी मानती है। यह अपने सिद्धांतो की मौलिकता एवं उपयोगिता के लिए प्रसिद्ध है। साहित्य से समृद्ध एवं व्यवहारिक सिद्धांतों के कारण वर्तमान में भी प्रासांगिक है।***

इस ज्ञान परंपरा का साहित्य केवल धार्मिक उपदेश मात्र न होकर, सामाजिक, ऐतिहासिक एवं राजनीतिक ज्ञान का भंडार है। इसमें नीति, व्यवहार, धर्म, गणित, भूगोल, कला, न्यायशास्त्र, खगोल, चिकित्सा, लोक, संस्कृति आदि का पर्याप्त ज्ञान उपलब्ध होता है। यह भारतीय ज्ञान परंपरा भारतीय संस्कृति की अक्षुण्णता एवं प्रजातंत्र की स्थापना का मूल आधार है।

कुंजीभूत शब्द– जैन, ज्ञान, साहित्य, परम्परा, प्रासंगिकता, प्राचीनता, अक्षुण्णता, न्यायशास्त्र, जैन ज्ञान परंपरा, संस्कृति।

प्रस्तावना– यद्यपि भारतीय ज्ञान परंपरा का प्रारम्भ वैदिक युग से माना जाता है एवं वैदिक युग का प्रारंभ ऋग्वेद से। तथापि ऋग्वेद में जिन प्रसंगों का उल्लेख मिलता है उसे ऋग्वेद पूर्व का मानना उचित होगा। यह सर्वथा सिद्ध बात है कि यदि किसी साहित्य में कोई घटना उल्लेखित की जाती है तो वह घटना उस साहित्य लेखन के पूर्व घटित हुई ही होगी। ऋग्वेद में तीर्थकर ऋषभदेव की पूजा या उनके होने के प्रमाण कई प्रसंगों में मिल जाते हैं, इससे सिद्ध होता है कि ऋषभदेव वैदिक युग से भी पूर्व विद्यमान रहे हैं।

"वेदोल्लिखित होने पर भी ऋषभदेव वेद पूर्व परंपरा के प्रतिनिधि हैं।"[1]

वर्तमान में सिंधु घाटी सभ्यता को प्राचीनतम सभ्यता माना जाता है। इस प्राचीनतम सभ्यता में जैन मूर्तियों का प्राप्त होना प्रमाणित करता है कि उस समय में भी जैन धर्म विद्यमान रहा है।

"मोहनजोदड़ो से उपलब्ध ध्यानस्थ योगियों की मूर्तियों की प्राप्ति से जैन धर्म की प्राचीनता निर्विवाद सिद्ध होती है।"[2]

"खड़गासन देव मूर्तियां भी योग की कार्योत्सर्ग मुद्रा में है और यह कार्योत्सर्ग ध्यान मुद्रा विशिष्टतया जैन है।"[3]

इतिहास, पुरातत्व, वेद, पुराण, साहित्य एवं विद्वानों के मत आदि अनेकानेक प्रमाणों से भलीभांति सिद्ध होता है कि जैन दर्शन वेदों से भी पूर्व विद्यमान था। इसे प्रारंभ में श्रमण, निगंठ, निर्ग्रन्थ, आर्हत, दिगम्बर आदि नामों से जाना जाता था।

जैन धर्म का प्रारंभ ऋषभदेव नामक प्रथम तीर्थंकर से ही माना जाता है। उन्होंने जब इस धरती पर जन्म लिया तब समय परिवर्तन का तीसरा काल चल रहा था। उनके पहले तक वसुंधरा पर कर्मभूमि नहीं, भोग भूमि थी। लोगों को आजीवीका के लिए कर्म करने की आवश्यकता नहीं थी।

'कल्पवृक्ष' नामक वृक्ष मानव की खान–पान, रहन–सहन संबंधी हर आवश्यकता की पूर्ति किया करते थे। जैसे–जैसे समय बीतता गया कल्पवृक्ष लुप्तप्राय होने लगे। लोग अपनी आजीविका एवं दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए परेशान होने लगे। वन्यजीव हिंसक प्रवृत्ति के होने लगे। जहां कल्पवृक्षों के कारण दिन एवं रात का भेद पता नहीं चलता था, हमेशा समान रूप से प्रकाश विद्यमान रहता था, वहीं सूर्य–चंद्र के उदय और अस्त के कारण दिन–रात का भेद पड़ गया। सारी प्रजा अपनी समस्याओं का हल खोजने अपने भावी राजा अयोध्या नरेश ऋषभनाथ के पास पहुंच गई। तब उन्होंने जीवन यापन करने के लिए छह कर्म असि, मसि, कृषि, वाणिज्य, विद्या, शिल्प की शिक्षा देकर कर्मभूमि की स्थापना की। उन्होंने पुरुषों के लिए 72 कलाएं सिखाईं। अपनी पुत्री ब्राह्मी एवं सुंदरी को अंक ज्ञान एवं अक्षर ज्ञान की शिक्षा देकर शिक्षा प्रणाली का शुभारंभ किया।

"तब वे एकत्रित होकर महाराज नाभिराय की आज्ञा अनुसार भगवान वृषभनाथ के पास पहुंचे और अपने दीनता भरे वचनों में प्रार्थना करने लगे– हे त्रिभुवन पति! हे दयानिधि! हम लोगों के दुर्भाग्य से कल्पवृक्ष तो पहले ही नष्ट हो चुके थे पर अब रही सही धान्य आदि भी नष्ट हो गई है .....इस तरह लोगों की आर्तवाणी सुनकर भगवान वृषभदेव का हृदय दया से भर गया। उन्होनें निश्चय किया कि पूर्व–पश्चिम विदेहों की तरह यहां पर भी ग्राम, शहर आदि का विभागकर असि, मसी, कृषि, शिल्प, वाणिज्य और विद्या इन छह कार्यों की प्रवृत्ति करनी चाहिए।"[4]

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- IV, Issues-26, YEAR- Oct.-Dec.-2022

राज्यकाल के दौरान सभागार में नीलांजना नृत्य देखते हुए, नृत्य के बीच में ही, नीलांजना नामक नृत्यांगना की मृत्यु हो जाने के कारण संसार की क्षणभंगुरता देखकर उन्हें संसार से वैराग्य की उत्पत्ति हुई। उन्होंने वैराग्य धारण कर दिगंबरी दीक्षा ले ली। राज्य सुख त्याग करके वन में जाकर आत्म साधना में लीन हो गए। तभी से मुनिचर्या का ज्ञान एवं आत्मसाधना का मार्ग प्रशस्त हुआ। आत्मसाधना की चरम अवस्था केवलज्ञान प्रकट होने पर उनका उपदेश दिव्यध्वनि रूप में जगत को प्राप्त हुआ। ज्ञानधारा बनकर संपूर्ण विश्व में प्रवाहमान रहा।

यही मुनि ऋषभनाथ निर्वाण प्राप्त करके जैन धर्म के प्रवर्तक एवं प्रथम तीर्थंकर कहलाए। प्रथम तीर्थंकर ऋषभनाथ के पश्चात उन्हीं की ज्ञान परंपरा में अजितनाथ, संभवनाथ, अभिनंदननाथ, सुमतिनाथ, पद्मप्रभु, सुपार्श्वनाथ, चंदाप्रभु, पुष्पदंत शीतलनाथ, श्रेयांसनाथ, वांसुपूज्य, विमलनाथ अनंतनाथ, धर्मनाथ, शांतिनाथ, कुंथुनाथ, अरहनाथ, मल्लिनाथ, मुनिसुव्रतनाथ, नमिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ एवं महावीर क्रमशः चौबीस तीर्थंकर हुए। जैन ज्ञान धारा का संपूर्ण ज्ञान 24 तीर्थंकरों के काल में अविच्छिन्न रूप से श्रुत अर्थात मौखिक परंपरा के द्वारा लगातार विद्यमान रहा।

अंतिम तीर्थेश महावीर स्वामी का शासन काल उनकी दिव्यध्वनि से प्रारंभ हो गया था। जो वर्तमान में भी चल रहा है। शायद इसी कारण लोग महावीर भगवान को जैन धर्म का संस्थापक कहते हैं। जो सर्वथा गलत है। यदि जैन धर्म का संस्थापक 24 वें तीर्थंकर महावीर भगवान को मानेंगे तो उनके पहले तेईस तीर्थंकरों की ज्ञान धारा की सिद्धि कैसे होगी? प्रतियोगी परीक्षाओं में गलत पढ़ाया जा रहा है।

"धर्म–जैन, मूलस्थान–भारत, संस्थापक–पार्श्वनाथ, महावीर, धर्म ग्रन्थ–जैन ग्रन्थ, पूजा स्थल–मंदिर।"[5]

जैन धर्म के तथ्यों को जैन विद्वानों, विशेषज्ञों, मुनिराजों से जानकर शिक्षा पद्धति में संशोधित तथ्यों को जोड़ने की आवश्यकता है। जैन धर्म के संस्थापक प्रथम तीर्थंकर ऋषभनाथ हैं एवं उनकी परंपरा में 24 तीर्थंकरों के पश्चात तीन केवली, पांच श्रुत केवली हुए। जिन्होंने संपूर्ण द्वादशांग के ज्ञान के साथ निर्वाण की प्राप्ति की। तत्पश्चात् काल के प्रभाव एवं स्मृति की क्षीणता के कारण धीरे–धीरे ज्ञान की उपलब्धता में हीनता आने लगी। गुरू शिष्य परंपरा से ज्ञान शिष्य–प्रशिष्यों द्वारा परिपाटी क्रम में हस्तांतरित किया जाता रहा। क्षयमान क्रम में ज्ञान ग्रहणता विद्यमान रही। इसके बाद गुरू परंपरा से आता हुआ सभी अंगों एवं पूर्वो का एक देश ज्ञान आचार्य धरसेन को प्राप्त हुआ।

"तदोसव्वेसिमंग पुव्वाणामेग देसो आइरिय परंपराए आगच्छमाणो धरसेनाइरियं संपत्तो।"[6]

आचार्य धरसेन महान निमित्त ज्ञानी एवं मंत्र शास्त्र के ज्ञाता थे। निमित्त ज्ञान से उन्होंने अपनी मृत्यु निकट जानकर श्रुतज्ञान परंपरा के लोप की चिंता की। उनके मन में विचार आया कि मेरी मृत्यु के साथ ही यह परंपरा से प्राप्त ज्ञान लुप्त हो जाएगा। आने वाले युगों के जीवों को ज्ञान परंपरा उपलब्ध रहे इस हेतु उन्होंने दक्षिण मुनि संघ से दो योग्य मुनिराजों को बुलवाया एवं परीक्षा उपरांत उन्हें, अपने कंठस्थ ज्ञान को लिपिबद्ध करने का कार्य सौंपा। ताड़पत्र पर तत्कालीन प्राकृत भाषा में लिखित यह ज्ञान परंपरा का प्रथम लिपिबद्ध ग्रंथ है। जिसे छह खंड होने के कारण षट्खंडागम नाम प्राप्त है। ग्रंथ लेखन के पश्चात दोनों मुनिराजों ने आचार्य पुष्पदंत एवं आचार्य भूतबलि नाम अपने गुरू से प्राप्त किया। यह एक सिद्धांत ग्रंथ है। इसमें संपूर्ण जैन दर्शन विद्यमान है। समझने समझाने की दृष्टि से इस पर कई टीकाएं भी लिखी गई हैं। ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी को इस ग्रंथ की पूर्णता के कारण इस दिवस प्रतिवर्ष जैन अनुयायियों द्वारा श्रुत पंचमी पर्व मनाया जाता है।

"ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी दिवस जिन श्रुत का जय जयकार हुआ।
श्रुत पंचमी पर्व पर श्री जिनवाणी का अवतार हुआ।"[7]

संस्कृति की पहचान उसके साहित्य से होती है। जैन संस्कृति साहित्य प्रधान संस्कृति है। वह साहित्य को केवल एक पुस्तक मात्र नहीं मानती अपितु देव की तरह आराध्य मानती है। जैन दर्शन में दैनिक कर्तव्यों के अंतर्गत देव शास्त्र गुरू की पूजन की जाती है। जैन दर्शन में जितना महत्व आराध्य देव का है उतना ही ग्रंथों एवं निर्ग्रंथों का।

"देवपूजा गुरूपास्ति स्वाध्याय संयमस्तपः।
दांन चेति गृहस्थानां षट्करमाणि दिने दिने।"[8]

यही कारण है कि प्रत्येक जैन मंदिर में शास्त्र भंडार आवश्यक रूप से होता है। शास्त्रों को बड़े ही विनय के साथ पढ़ा एवं संजोया जाता है। ज्ञान की महिमा होने के कारण शास्त्र सभाएं प्रतिदिन होती हैं। अधिकांश व्यक्ति स्व–अध्ययन अर्थात स्वाध्याय भी करते हैं। निर्ग्रंथ गुरू उपदेश के माध्यम से ज्ञान आराधना करवाते हैं। विशेष ज्ञानी, आचार्य, पंडित, विद्वान, मुनिराज ग्रंथ रचना में तत्पर रहते हैं एवं अपने ज्ञान की परंपरा को हस्तांतरित कर अक्षुण्य बनाये रखते हैं।

ग्रंथ लेखन परंपरा प्रारंभ के साथ ही विभिन्न आचार्यों, मुनिराजों, पंडितों एवं विद्वानों द्वारा कई ग्रंथों का लेखन अनवरत प्रक्रिया के रूप से चलता रहा। आचार्य कुंदकुंद द्वारा रचित समयसार, नियमसार, प्रवचनसार, अष्टपाहुड़, पंचास्तिकाय,

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- IV, Issues-26, YEAR- Oct.-Dec.-2022

रयणसार, देशभक्ति, वारसाणुवेक्खा, आचार्य उमास्वामी कृत तत्वार्थसूत्र, आचार्य समंतभद्र कृत आप्तमीमांसा, स्वयंभूस्तोत्र, रत्नकरंड श्रावकाचार, स्तुतिविद्या, युक्त्यनुशासन, आचार्य देवसेन कृत तत्वसार, आराधनासार, आलापपद्धति, दर्शनशास्त्र, भावसंग्रह, लघुनयचक्र, आचार्य पूज्यपाद कृत इष्टोपदेश, समाधितंत्र, सर्वार्थसिद्धि, वैदिकशास्त्र, सिद्धप्रियस्त्रोत, जैनेंद्र व्याकरण, आचार्य योगीन्दुदेव कृत परमात्मप्रकाश, योगसार, नौकार श्रावकारचार, तत्वार्थटीका, अमृताशीती, सुभाषिततंत्र, अध्यात्म संदोह, आचार्य अंकलंकदेव कृत अष्टशती, लघीयस्त्रय, न्याय विनिश्चय सवृत्ति, सिद्धि विनिश्चय सवृत्ति, प्रमाणसंग सवृत्ति, तत्वार्थराजवर्तिक, आचार्य जिनसेन कृत हरिवंशपुराण, आदिपुराण, आचार्य गुणभद्र कृत उत्तरपुराण, आत्मानुशासन, आचार्य वादीभसिंह सूरी कृत छत्रचुड़ामणि, गद्य चिंतामणि, आचार्य अमृतचंद कृत तत्वार्थसार, पुरुषार्थसिद्धिउपाय, आत्मख्याति टीका, लघुतत्वसफोट, तत्वप्रदीपिका टीका, आचार्य गुणधर कृत कषायपाहुड़, आचार्य नेमीचंद सिद्धांत चक्रवर्ती कृत गोम्मटसार, त्रिलोकसार, आचार्य वीरसेन कृत धवलाटीका, आचार्य नेमीचंद कृत बृहद द्रव्यसंग्रह, आचार्य प्रभाचंद कृत प्रमेयकमलमार्तड, आचार्य मानतुंग कृत भक्तामर स्त्रोत, आचार्य शुभचंद कृत ज्ञानार्णव, आचार्य शिवकोटि भगवती आराधना, आचार्य अमितगति धर्मपरीक्षा, आचार्य पद्मप्रभमलधारी पारसनाथस्त्रोत, आचार्य श्रीधर गणितसारसंग्रह, आचार्य माणिक्यनंदी परीक्षामुख, आचार्य रविसेन पद्मपुराण आदि प्राकृत एवं संस्कृत ग्रंथों के कुछ उदाहरण हैं। जैन दर्शन में प्राचीन काल से ही प्रचुर मात्रा में साहित्य लेखन किया जाता रहा है। संपूर्ण साहित्य एवं रचनाकारों के नाम लेखन स्थानाभाव से लिखना संभव नहीं है, विषय विस्तार की दृष्टि से भी नाम लेखन अनुचित होगा।

समय की तत्कालीन योग्य भाषा अनुरूप लिखे गए ग्रंथों से जैन साहित्य समृद्धता को प्राप्त है। संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश से होते हुए हिंदी, अंग्रेजी, गुजराती, राजस्थानी, तमिल, तेलुगू, कन्नड़ आदि समस्त भारतीय एवं कई विदेशी भाषाओं में भी जैन ग्रंथों की उपलब्धता है। 6 माह तक लगातार होली जलाए जाने के बावजूद आज भी दस लाख से अधिक ग्रंथ जैन साहित्य में उपलब्ध है। वर्तमान में भी सभी प्रमुख जैन आचार्य, मुनिराज, आर्यिकामाता एवं समाज के प्रमुख विद्वान मनीषी साहित्य रचना में तत्पर हैं।

जैन साहित्य का उल्लेख हिंदी इतिहास के विकास क्रम में भी अछूता नहीं है। हिंदी भाषा के उभ्दव एवं विकास के प्रथम काल आदिकाल का अध्ययन जैन साहित्य के अध्ययन के बिना अधूरा ही रहता है। इसमें जैन साहित्य के अपभ्रंश भाषा के कई ग्रंथों को आधार माना जाता है। स्वयंभू कृत 'पउम चरिउ' को जैन रामायण कहा जाता है। पुष्पदंत का 'महापुराण', 'णय कुमार' चरिउ' प्रमुख चरित्र काव्य हैं तथा 'जसहर चरिउ', हिंसा–अहिंसा वर्णन संबंधी ग्रंथ है। जोइन्दु द्वारा रचित 'योगसार', 'परमात्माप्रकाश' दर्शन एवं अध्यात्म संबंधी ग्रंथ हैं। रामसिंह 'पाहुड़दोहा' में जैन रहस्यवाद को प्रस्तुति मिली है। आसगु कृत 'चंदनवालारास' प्रमुख रास काव्य है। 'भरतेश्वरबाहुबलीरास' हिंसा विरोधी एवं समाज में युद्ध की विभीषिका संबंधी ग्रंथ होने के साथ–साथ, जिनदत्तसूरि कृत, उपदेश रसायन चर्चरी काव्य रूप है। हेमचंद्र का 'शब्दानुशासन' व्याकरण संबंधी श्रेष्ठ ग्रंथ है।

साहित्यिक आंकलन में जैन साहित्य विधाओं की दृष्टि से भी समृद्ध है। साहित्य की प्रत्येक विधा में जैन साहित्य की रचना की गई है। ऐसी कोई भी विधा नहीं जिसमें जैन साहित्य न लिखा गया हो। चाहे वह महाकाव्य हो, खंडकाव्य हो या मुक्तक, चंपु काव्य हो। रास काव्य, चरित्र काव्य हिन्दी साहित्य को जैन साहित्य की देन है। फागु, चर्चरी आदि जैन साहित्य के प्रमुख विशेष काव्य हैं। नाटक, एकांकी, निबंध, कहानी, उपन्यास, आत्मकथा, जीवनी, यात्रासाहित्य, पत्र साहित्य, अभिनंदन ग्रंथ, व्याकरण ग्रंथ, कोश आदि हर विधा में साहित्य उपलब्धता जैन साहित्य की अपनी विशिष्ट पहचान है। इस संबंध में महापंडित राहुल सांकृत्यायन लिखते हैं–

"यदि आपको भारतीय साहित्य व संस्कृति की सच्ची झलक देखनी है तो जलपान के लिए लौटा डोर और खाने के लिए सत्तू साथ में बांध लो और प्रत्येक जैन मंदिर और वहां के शास्त्र भंडारों को छान डालो वहां आपको भारतीय संस्कृति के सच्चे रत्न मिलेंगे"[9]

"सृष्टि की रचना का पता नहीं किसने की पर साहित्य की सृष्टि तो जैन लेखकों ने की है।"[10]

"राजस्थान के जैन ग्रंथागार सरस्वती के पीहर हैं।"[11]

भारतीय भाषाओं के इतिहास की दृष्टि से भी जैन साहित्य बहुत महत्वपूर्ण है।"[12]

इस प्रकार जैन साहित्यिक रचनाओं की प्रमाणिकता, प्राचीनता एवं शास्त्र भंडारों की विशालता स्वयमेव सिद्ध हो जाती है।

जैन साहित्य की विभिन्न विधाओं संबंधी जानकारी इस छोटे से लेख में समाहित नहीं की जा सकती है। इसके विशेष अध्ययन के लिए प्रोफेसर डॉ. वीरसागर जैन दिल्ली का लेख "जैन विद्या की व्यापकता" पठनीय है।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- IV, Issues-26, YEAR- Oct.-Dec.-2022

जैन ज्ञान परंपरा के परिचय के पश्चात जैन साहित्य के कथ्य पर विचार भी प्रासंगिक ज्ञान पड़ता है। विश्व के समस्त दर्शनों की तरह जैन दर्शन भी तत्वों को मानता है। जैन दर्शन में सात तत्व होते हैं। जीव, अजीव, आश्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष इन सातों तत्वों पर श्रद्धा करना ही सम्यक दर्शन अर्थात् सच्ची श्रद्धा है। सम्यक दर्शन के बिना धर्म का प्रारंभ भी नहीं माना जाता ऐसा वर्णन जैन साहित्य में मिलता है।

"जीवाजीवाश्रव बंध संवर निर्जरामोक्षास्तत्वं।"[13]

"तत्वार्थ श्रद्धानं सम्यकदर्शन।"[14]

जैन दर्शन में आराध्य का स्वरूप वीतरागी, सर्वज्ञ एवं हितोपदेशी है। जो राग–द्वेष से रहित हो, संपूर्ण लोक आलोक को एक साथ जानता हो एवं कल्याण का उपदेश देता हो वही सच्चा देव है। जैन दर्शन व्यक्तिवादी नहीं, वस्तुवादी दर्शन है एवं जैन साहित्य में उसी वस्तुवादी दर्शन की व्याख्या है। जैन साहित्य में किसी व्यक्ति विशेष की पूजा अर्चना नहीं की गई है। इसमें उसकी वंदना की गई है जिसने भी इन गुणों को धारण कर लिया है। यथा–

"जिसने राग द्वेष कामादिक, जीते सब जग जान लिया।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया।।
बुद्ध, वीर, जिन, हरिहर, ब्रह्म, या उसको स्वाधीन कहो।
भक्ति भाव से प्रेरित हो यह चित्त उसी में लीन रहो।।"[15]

सच्चे हित उपदेशक की वाणी जिनवाणी अर्थात शास्त्र हैं। सच्चा उपदेश वही है जो संसार से पार उतरने की शिक्षा दे। निर्ग्रंथों की वाणी ही ग्रंथ हैं। यह चार अनुयोगों में विभक्त है। कथन शैली ही अनुयोग है।

प्रथमानुयोग कथा साहित्य संबंधी विषयों को संजोता है। इसमें चरित्रकाव्य, रासकाव्य बारहमासा, फागु एवं गद्य विधा द्वारा 63 शलाका पुरुषों एवं धर्म मार्ग पर चलने वाले जीवों की कथाएं कहकर धर्म मार्ग पर चलने की शिक्षा दी जाती है। पद्मपुराण, चौबीसीपुराण, महापुराण, हरिवंशपुराण, आदि प्रथमानुयोग के ग्रंथ हैं।

"प्रथमानुयोग मर्थाख्यानं चरितं पुराणमणि पुण्यम्।
बोधिसमाधि निधानं बोधति बोधः समीचीनः।"[16]

करुणानुयोग द्वारा जैन गणित, जैन भूगोल, तीनों लोक स्वर्ग, नरक की स्थिति, चारों गतियों में उत्कृष्ट, जघन्य आयु संबंधी चर्चा, लोक अलोक के विभाग, कर्मों के बंध, उदय सत्ता, क्षय, क्षयोपशम, आदि वर्णन के द्वारा धर्म मार्ग पर लगाया जाता है। धवल, जयधवल, महाधवल, गोम्मटसार आदि इस कोटि के ग्रंथ हैं।

"लोकालोक विमरत्तेर्युग परिकृत् ते चतुर्थ तीनांच।
आदर्शमिव तथा मतिरवैति करुणानुयोगं च।।"[17]

चरणानुयोग आचरण की प्रमुखता से लिखा गया साहित्य है। इसमें आचरण की शुद्धता संबंधी वाक्यों द्वारा धर्माचरण की शिक्षा दी जाती है। गृहस्थ एवं मुनि धर्म के आचरण की विशेषताओं, विधियों एवं स्वरूप संबंधी ग्रंथ चरणानुयोग के ग्रंथ कहे जाते हैं। सागार धर्मामृत, अनगार धर्मामृत इस श्रेणी के ग्रंथ हैं।

"गृहमेध्यनगाराणां चारित्रोत्पत्तिवृद्धिरक्षांगम्
चरणानुयोग समयं सम्यग्ज्ञानं विजानाति।।"[18]

छह द्रव्य, सात तत्व, नौ पदार्थों की प्रमुखता से जहां कथन किए जाते हैं वह द्रव्यानुयोग है। समयसार, परमात्मप्रकाश आदि ग्रंथ द्रव्यानुयोग की श्रेणी में आते हैं।

"जीवाजीव सुतत्वे पुण्यापुण्ये च बंध मोक्षौ च।
द्रव्यानुयोग दीपः श्रुतविद्यालोकमातनुते।।"[19]

जैन दर्शन में गुरु निरग्रंथ होते हैं। दिगम्बर संत जिन्होंने वीतरागी मार्ग पर चलने हेतु सच्ची श्रद्धा पूर्वक धर्म को अंगीकृत कर लिया है, वे आचार्य, उपाध्याय एवं सर्व साधु ही गुरु संज्ञा को प्राप्त हैं। जैनदर्शन भी विश्व के सभी दर्शनों की तरह गुरु को विशेष महत्व देता है। संसार सागर से पार उतरने के लिए गुरु ही जहाज हैं।

"गुरु की महिमा बरनी न जाए, गुरु नाम जपों मन वचन काय।"[20]

"संसार सागर तरण तारण गुरु जहाज विशेषिये।
जग मांहि गुरु सम कहे बनारसी और न दूजो पेखिये।।"[21]

यदि गुरू सुगुरू है तो वह सच्चे पथ प्रदर्शक होंगे। यदि वह कुगुरु हुए तो पत्थर की नाव की तरह संसार सागर में डूबोने का ही कार्य करेंगे।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- IV, Issues-26, YEAR- Oct.-Dec.-2022

"ते कुगुरु जन्म जल उपल नाव।"[22]

जैन ज्ञान परंपरा भाव प्रधान परंपरा हैं। यह झूठे दिखावे से कोसों दूर रहने की शिक्षा देती है। जिनवाणी कहती है कि श्रद्धा मजबूत रहना आवश्यक है। व्यर्थ का दिखावा धर्म नहीं है। प्रत्येक जीव अपनी शक्ति अनुसार भक्ति करके अपना कल्याण का मार्ग प्रशस्त कर सकता है।

जैन धर्म जबरदस्ती का धर्म नहीं वह तो जबरदस्त धर्म हैं। हर प्राणी को आत्म कल्याण के योग्य बताता है।

"कीजै शक्ति प्रमाण शक्ति बिना सरधा धरैं।
द्यानत सरधावान अजर अमर पद भोगवैं"।।[23]

यह ज्ञान परंपरा वस्तु व्यवस्था की स्वतंत्रता की जननी हैं। जैन दर्शन मानता हैं कि इस जगती का कण कण स्वतंत्र हैं। वस्तु व्यवस्था निश्चित है। अतः जिस वस्तु का जैसा स्वरूप है, वैसा ही है और रहेगा। जल का स्वभाव शीतलता है, तो वह तीनों काल में शीतल ही रहेगा। वह कभी अपने आप गर्म नहीं होता। यदि किसी निमित्त से गर्म कर भी दिया जाए, तो भी सामान्य छोड़ देने पर वह शीतल ही हो जाएगा। इसी तरह आत्मा सुखरूप है। हर समय वस्तु स्वरूप विचार कर समता भाव धारण कर सुखी रहना चाहिए।

"वस्तु स्वरूप विचार खुशी से सब दुख संकट सहा करें।।"[24]

यह ज्ञान धारा कर्म एवं फल की निश्चिता के सिंद्धात पर आधारित है। जैन धर्म, कर्म आधारित धर्म है। जीव जैसा कर्म करेगा वैसे ही फल की प्राप्ति उसे होगी। जो कर्म करेगा उसे ही फल भोगना पड़ेगा। यही कर्म सिंद्धात है। कर्म सिंद्धात एकदम उदार प्रवृत्ति का है। जिसने उधार लिया उसे ही चुकाना पड़ेगा चाहे वह राजा हो या रंक। कर्म सिंद्धात के समक्ष सभी बोने सिद्ध होते हैं।

"स्वयं किए जो कर्म शुभाशुभ फल निश्चय ही वे देते।
स्वयं करे फल देय अन्य तो स्वयं किए निष्फल होते।।
अपने कर्म सिवाय जीव को अन्य न फल देता कुछ भी।
पर देता है यह विचार तज स्थिर हो छोड़ प्रमादी बुद्धि।।"[25]

जैन दर्शन दासता का दर्शन नहीं है। यह भक्तों को भक्त ही नहीं बने रहने देता। यह भक्त से भगवान बनने का मार्ग है। जैन दर्शन में भगवान अवतार नहीं लेते, भगवान बनते हैं। जो निर्ग्रन्थ
मार्ग अपनाकर, जिनदेव द्वारा बताए हुए रास्ते पर आचरण करता है, वह स्वयं भगवान बन सकता है। यह आत्म कल्याण का मार्ग है। यह आचरण का मार्ग है। यह स्व–पर भेदविज्ञान का मार्ग है।

"तुम भक्तों को कुछ नाहिं देत अपने समान बस बना लेत।।"[26]

"भूतकाल प्रभु अपका, वह मेरा वर्तमान।
वर्तमान जो आपका वह भविष्य मम जान"।।[27]

जैन ज्ञान परम्परा आकाशधर्मा परम्परा है। जिस तरह आकाश सभी के लिए समान रूप से अवगाहन देता है पशु–पक्षी, मानव–दानव आदि के भेद से उसकी अवगाहन धर्मिता प्रभावित नहीं होती। उसी तरह जैन धर्म के पालन का अधिकार केवल जैनियों को नहीं, संसार के सभी प्राणियों को है। जैन धर्म व्यक्ति विशेष का नहीं जीव मात्र का धर्म है। जैन साहित्य में चोरए भीलए चांडाल, शूद्र यहां तक कि शेर, हाथी, कुत्ता, नेवला आदि ने भी सम्यक्त्व ग्रहण कर धर्म पालन किया है। ऐसे प्रमाण शास्त्रों में मिलते हैं।

"अंजन और अनंतमति जो राय उदयन कर्म हती जो।
रेवती राणी जिनवर भक्ता, पुनि जु जिनेंद्र भक्त जिनरक्ता।। "[28]

जैन ज्ञान परंपरा की चर्चा हो और अहिंसा की चर्चा न हो यह असंभव है। जैन धर्म अहिंसा आधारित धर्म हैं। अहिंसा एक ऐसा मूल सिद्धांत है, जिसके साथ अन्य सभी सिद्धांत स्वयमेव ही पलते चल जाते है। मन, वचन, काया से किसी अन्य के दस प्रकार के प्राणों की रक्षा करना या कष्ट न देना ही द्रव्य अहिंसा है एवं अपने भाव प्राणों की रक्षा ही भाव अहिंसा। यदि जीव के परिणाम या भाव निर्मल रहेंगे, तो स्वयमेव जीव हर पाप से दूर रहेगा ही रहेगा। जो स्वानुशासन एवं विश्व शांति का कारण बनेगा।

जैन दर्शन का एक मूल सिद्धांत प्रतिक्रमण या स्व मूल्यांकन। अपने द्वारा किए गए समस्त पापों की क्षमायाचना या पश्चाताप आत्म विश्लेषण ही प्रतिक्रमण है, जो विश्व के प्रत्येक प्राणी में हो, तो संसार के सभी झगड़े स्वयमेव समाप्त हो जाएं। जैन धर्मपालक जानवूझकर कोई पाप नहीं करता, यदि सांसारिक दिनचर्या में अनजाने में कोई पाप हो जाए तो उसके लिए

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- IV, Issues-26, YEAR- Oct.-Dec.-2022

प्रतिक्रमण का विधान है।

"स्वकृतादशुभयोगात्प्रति निर्वृत्तिः प्रतिक्रमणम् ।"[29]

"प्रतिक्रम्यते प्रमादकृत दैवसिकादि दोषो निराक्रियते अनेनेति प्रतिक्रमणम्।।" [30]

"दर्शन वही महत्वपूर्ण है जो परिवर्तित युगीन परिस्थितियों के समाधान देने में सक्षम हो इस दृष्टि से जैन दर्शन महत्वपूर्ण दर्शन है।" [31]

विश्व शांति के लिए योगदान– संविधान में वर्णित स्वतंत्रताए समानताए विश्वबंधुत्व, धर्मनिरपेक्षताए समता, समन्वय, सामंजस्य एवं अहिंसा आदि युगीन समस्याओं के समाधान है। जो जैन दर्शन की देन है एवं वर्तमान में प्रासांगिक भी। जैन साहित्य में केवल जैन धर्म या दर्शन की ही बात नहीं लिखी गई है बल्कि अन्यान्य समस्त विषय इसमें समाहित हैं। डॉ. पी. सी. जैन् अपने 'जैन दर्शन में प्रजातंत्र की संकल्पना लेख' में लिखते हैं–

"जैन साहित्य तीर्थकरों द्वारा उपदेशित, गणधरों द्वारा ग्रथित तथा परवर्ती आचार्यों द्वारा व्याख्यायित ज्ञान के भंडार हैं। जिनमें इतिहास, भूगोल, आयुर्वेद, गणित, खगोल, कला, चिकित्सा, न्यायशास्त्र, धर्मनीति, समाजशास्त्र आदि का प्रचुर ज्ञान संचित है। ऐसे साहित्य में केवल सत् पुरूषों द्वारा निसर्जित आगमित वाणी का उल्लेख नहीं है अपितु नैसर्गिक एवं प्राकृतिक सिद्धांतों की उपदेश माला भी है तथा उसमें साहित्यकार की आंखों देखी समसामयिकी, समाज की संस्कृति, सभ्यता एवं राजनीति की झलक भी है। इससे साहित्य में प्राचीन राजनीति का अक्षय ज्ञान है साथ ही इस साहित्य में निहित राजनीति मूल्य एवं विचार आज के परिपेक्षय में अवश्य ही ग्राहक एवं आदर्श हैं।"[32]

निष्कर्ष– कह सकते हैं कि जैन ज्ञान परंपरा प्रचीनतम ज्ञान परंपरा है एवं अनेकानेक मौलिक सिद्धांतो के साथ अपनी अलग विशेषताएं लिए हुए है। साहित्य के प्रमुख सिद्धांत वर्तमान युगीन समस्याओं के अचूक समाधान हैं। यह एक व्यापक उदार एवं वर्तमान में प्रासांगिक ज्ञान परंपरा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. दिनकर, रामधारी सिंह, संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ क्रं. 147.
2. गैरोला, वाचस्पति, भारतीय दर्शन, पृष्ठ क्रं. 86.
3. चंदा, रामप्रसाद, मॉडर्न रिव्यू अगस्त 1932 कोलकाता।
4. जैन, पन्नालाल, साहित्याचार्य, चौबीसी पुराण भाषा वचनि का, जैन साहित्य सदन, दिल्ली, पृष्ठ क्रं. 49.
5. चौधरी, नीरज, लूसेन्ट सामान्य ज्ञान, लूसेन्ट पब्लिकेशन पटना, द्वितीय संस्करण 2005, पृष्ठ क्रं. 182.
6. वीरसेन, आचार्य, धवला, पुस्तक 1 पृष्ठ क्रं. 981.
7. पवैया, राजमल, श्री श्रुत पंचमी, पूजन, पंडित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर, 20 वां संस्करण 1999 पेज नं. 207.
8. आचार्य, पद्यनंदी, पंच विन्शतिका, सप्तम अध्याय, पृष्ठ क्रं. 403/7 श्लोक।
9. जैन, प्रोफेसर वीरसागर, विद्या की व्यापकता लेख, पेज नं. 219.
10. वही।
11. वही, डॉ कस्तूरचंद कासलीवाल।
12. डॉ. विंटरनिट्रज, अहिस्ट्री ऑफ इंडियन लिटरेचर।
13. आचार्य, उमा स्वामी, तत्वार्थ सूत्र, प्रथम अध्याय सूत्र क्रं. 04.
14. वही, सूत्र क्रं. 02.
15. मुख्तार, जुगल किशोर, मेरी भावना, जैन हितैषी अप्रैल–मई संयुक्त अंक 1916.
16. आचार्य, समंतभद्र, रत्नकरण्ड श्रावकाचार, श्लोक नंबर 43.
17. वही, श्लोक नंबर 44.
18. वही, श्लोक नंबर 45.
19. वही, श्लोक नंबर 46.
20. द्यानतराय, देव शास्त्र गुरु पूजन, जैन भारती संग्रह, दिगम्बर जैन साहित्य प्रकाशन समिति, बरेला, पेज नंबर 75.
21. वही, श्लोक नंबर 75.
22. दौलतराम, छहढाला, दूसरी ढाल, छंद नंबर 10.
23. द्यानतराय, देव शास्त्र गुरु पूजन, जैन भारती संग्रह, दिगम्बर जैन साहित्य प्रकाशन समिति, बरेला, पेज नंबर 75.

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- IV, Issues-26, YEAR- Oct.-Dec.-2022

24. मुख्तार, जुगल किशोर, मेरी भावना, जैन हितैषी अप्रैल–मई संयुक्त अंक 1916.
25. युगल, जुगल किशोर, नीरव निर्झर, जिनेंद्र अर्चना, पंडित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर, 20 संस्करण 1999, पेज नंबर 239.
26. भारिल्ल, हुकमचंद, सिद्ध पूजन, जिनेंद्र अर्चना, पंडित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट जयपुर, 20 संस्करण 1999 पेज नंबर 111.
27. वही, पेज नंबर 175.
28. कासलीवाल, दौलतराम, अध्यात्म बारह खड़ी, श्री साहित्य प्रकाशन दिल्ली, 2022, पेज नंबर 58.
29. आचार्य, शिवकोटि, भगवती आराधना वृत्ति, पेज नंबर 61.
30. गोम्मटसार, जीव कांड, जीव तत्व दीपिका, टीका, गाथा 370.
31. जैन, डॉ. पी.सी, 'जैन दर्शन में प्रजातंत्र की संकल्पना', जैन धर्म और दर्शन का विश्व शांति के लिए योगदान, पेज नंबर 70.
32. वही, पेज नंबर 58.

*****